''भारत की अवसरवादी राजनीति में साहित्य की भूमिका''

शोधार्थी

नाम– संदीप कुमार
विषय– राजनीतिशास्त्र
संस्थान– आगरा कॉलेज, आगरा
डा. भीमराव आंबेडकर विवि, आगरा

शोध पत्र का सार :

राजनीति एक ऐसी प्रक्रिया है जो समाज के कौने–कौने तक फैली हुई है। आज 15–16 साल का हर नौजवान राजनीति में अपनी समक्ष रखता है तो बुद्धिजीवियों की बात ही अलग है। समाज का कोई भी इसांन राजनीति से अछूता नहीं रह सकता। चाहे वह किसी भी व्यवसाय से सम्बन्धित हो। हर पेशे का व्यक्ति राजनीति की समझ को अपने तरीके से व्यक्त करता है तथा उसका फायदा उठाना चाहता है। हमारे साहित्यकार भी आज राजनीति से परे नहीं है। कवियों की कविताओं, कहानी, उपन्यासों में राजनीति के स्वर अक्सर देखने को मिलते रहते हैं।

हमारे पास जो साहित्य उपलब्ध है उसमें हमें कई किताबें ऐसी मिलती है जिनमें राजनीति का दर्शन कराया जाता है। वर्षों पुराना साहित्य भी हमें उस समय के राजनीति की पहचान कराता है। कवियों और लेखकों ने हमेशा से राजनीति पर व्यंग्य में या समर्थन में रचनाएँ की हैं। हमारे समाज में जो साहित्य उपलब्ध है। वह हमें समाज की राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक दशा से परिचित कराता है जिस समय का हम साहित्य पढ़ते है। उसी समय समाज की स्थिति क्या थी यह हमें साहित्य से पता चलता है।

साहित्य और राजनीति का वर्षों से सम्बन्ध रहा है। समाज में किस प्रकार की राजनीति हो रही है। कवियों की कलम से आम नागरिकों के सामने प्रस्तुत की जाती है। प्रस्तुत शोध पत्र में दर्शाया गया है कि भारत की अवसरवादी राजनीति के साहित्य में किस प्रकार दर्शन होते हैं। और किस प्रकार राजनीति के पक्ष व विपक्ष में साहित्य का सृजन होता है।

कीवर्ड – राजनीति, साहित्य, दर्शन, भूमिका, समाज, अवसरवादी

प्रस्तावना –

हिन्दी साहित्य में हम एक उक्ति हमेशा से सुनते आए है कि ''साहित्य समाज का दर्पण'' है। अर्थात साहित्य हमें हमारे समाज में घटित होने वाली सभी क्रियाओं का दर्शन कराता है। या हम कह सकते हैं कि कवियों, लेखकों, साहित्यकारों द्वारा जिन कविता, कहानी, उपन्यासों की रचनाएं होती है, वे हमें कहीं न कहीं समाज में हो रही घटनाओं से अवगत कराती है। कुछ राजनेता, बुद्धिजीवी, समाज सुधारक हमें अपने भाषणों से समाज से परिचय कराते है परन्तु जो हमें भाषणों से नहीं बता सकता वह अपनी कलम का प्रयोग करता है। और समाज में घटित हो रही क्रियाओं का वर्णन काल्पनिक कहानी व पात्रों के माध्यम से समाज के सम्मुख प्रस्तुत करता है। जो सदियों तक समाज में रहता है। जिसे न सिर्फ हम पढेगें बल्कि हमारे आने वाली पीढ़ी भी हमारे समय की स्थिति से रूबरू होगी।

वर्तमान समय में समाज का हर नागरिक स्वार्थपूर्ण अवसर की तलाश में रहता है। जिस कार्य में व्यक्ति का सर्वाधिक स्वार्थ सिद्ध होता है। वह उसी कार्य की ओर उन्मुख होता है। चाहे वह किसी भी पेशे से क्यों न हो। राजनीति एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें किसी भी सत्ता के पक्ष में पूर्ण समर्थन नहीं होता। कुछ पक्षकार होते हैं तो विपक्षी। ऐसे में यह प्रश्न उठता है कि साहित्यकार जो इसी समाज का नागरिक है। वह कैसे इस संकीर्ण भावना से अछूता रह सकता है? क्या समाज में रचित साहित्य निस्पक्ष प्रकृति से रचा गया है? या साहित्यकार भी पक्ष और विपक्ष की धारणा साहित्य का सृजन करते हैं।

प्रस्तुत शोध पत्र पर हम उपर्युक्त प्रश्नों को समझने व उत्तर देने का प्रयास करेगें तथा देखते है अवसरवादी राजनीति में साहित्य की भूमिका कैसी है?

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र के उद्देश्य निम्न प्रकार है,

1. यह पता लगाना कि वर्तमान साहित्य राजनीति से कितना प्रभावित है।
2. पक्ष या विपक्ष में रचित साहित्य की पहचान करना।
3. अवसरवादी राजनीति में साहित्यकारों की दिशा व दशा का पता लगाना।
4. साहित्य और राजनीति के सम्बन्धों का पता लगाना।

मुख्य पृष्ठ

साहित्य और राजनीति दो अलग–अलग शब्द है। साहित्य से मतलब किसी भी प्रकार के उपलब्ध पाठ्य सामग्री से होता है। जो हमें हमारे विषय से सम्बन्धित जानकारी उपलब्ध कराता है। किन्तु जहाँ पर साहित्य से हमारा तात्पर्य उस साहित्य से जो समाज में संगीत के रूप में उपलब्ध होता है तथा जिसे काल्पनिक घटना व पात्रों के साथ जोड़ा जाता है। जो कवियों व लेखकों की कलम से लिखा जाता है। अर्थात् हम आमतौर पर हिन्दी में लिखे नाटक, उपन्यास, कविता आदि को साहित्य कहते हैं। किन्तु सही अर्थों में साहित्य किसी भी प्रकार उपलब्ध लिखित सामग्री को कहा जाता है। परन्तु हम यहाँ बात कर रहे है केवल हिन्दी साहित्य की।

दूसरा शब्द है राजनीति। राजनीति से आमतौर पर सभी लोग वाकिफ हैं। फिर भी हम राजनीति शब्द देखे तो राजनीति एक ऐसी नीति जो राज्य करने योग्य हो। राजनीति एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक दल अपने अपने चतुराई से जनता पर शासन स्थापित करते हैं। तथा दूसरे दलों की आलोचना कर अपने शासन को वैध ठहराने की हर सम्भव प्रयास करते है।

हमारा विषय है कि भारत की अवसरवादी राजनीति में साहित्य की भूमिका। यहाँ हमे यह देखना है कि साहित्य और राजनीति किस प्रकार से समाज को प्रभावित करते है और किसे भाँति दोनों आपस में सम्बन्धित है। राजनीति एक व्यापक प्रक्रिया है। आज स्वार्थपूर्ति की मंशा रखने वाले समाज में राजनीति का स्वरूप अवसरवादी हो गया है। सिर्फ राजनीति ही नही समाज की हर प्रक्रिया अवसरवाद से प्रभावित है। साहित्य में भी अवसरवादियों की कमी नहीं है। आज साहित्यकार भी अवसरों का फायदा उठाने में कम नहीं है क्योंकि आज का समाज स्वार्थ सिद्धि में व्यस्त है।

चूंकि आज हम एक ऐसा समाज में जी रहे है। जहाँ हर कोई अवसरों की तलाश में रहता है। फिर चाहे वह किसी प्रकार के पेशे से जुड़ा है। आज राजनीति समाज में व्यापक स्तर पर समा गई है। समाज का कोई नागरिक इस राजनीति से अछूता नहीं है। राजनीति एक खुली प्रक्रिया है, यह बहती नदी के समान है जिसमें हर कोई हाथ धोना चाहता अर्थात् यह बहती गंगा में हाथ धोने के समान है। क्योंकि निरक्षर व्यक्ति भी राजनीति में प्रवेश कर सकता है। समाज में व्यक्ति सम्बन्धों में बंधा होता है। एक दूसरे की अपने पराये के रूप में पहचानता है और उसी हिसाब से कार्य करता है। चूँकि साहित्यकार भी समाज से ही पैदा होता है। तो वे न राजनीति से है और न ही अवसरवाद से।

यहाँ तीसरा एक महत्वपूर्ण शब्द है, जिसका हम बार बार उल्लेख कर रहे हैं। वह है अवसरवाद। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति उन अवसरों का फायदा उठाते हैं। जिसमें उनके ज्यादा–ज्यादा से हित दिखाई देते हैं। आज इस विचार से कोई नहीं बचा है। राजनीति में जब राजनीतिक दल चुनाव के माध्यम से सत्ता में आते है तो ऐसा नहीं होता है कि सभी नागरिक सत्ता के पक्ष में होते हो। कुछ सत्ता के पक्ष में होते हैं, तो कुछ सत्ता के विरोध में अर्थात मानव समुदाय राजनीतिक प्रक्रिया के अनुरूप दो धड़ों में होता है। सत्ता पक्ष और विपक्ष।

सत्ता पक्ष हमेशा सत्ता के कार्यों की भूरि–भूरि प्रशंसा करता है तो वहीं विपक्ष कड़ी आलोचना करता दिखाई देता है। परन्तु ऐसा नहीं होता कि राजनीति में किया गया हर कार्य पूर्णरूप से प्रशंसनीय हो या पूर्णरूप से आलोचनीय। परन्तु आज समाज अवसरवाद से बुरी तरह प्रभावित है। वह कभी–कभी पक्ष में खड़े होकर अपने हित भी भूल जाता है, फिर भी उसे पक्ष में प्रशंसा करने पर खुशी जाहिर होती है। ऐसी ही स्थिति विपक्ष की है। वह भी सत्ता की आलोचना में इतना व्यस्त होता है कि सही–गलत का अंदाजा ही नहीं रहता है। ऐसी स्थिति में निष्पक्ष बात करना बड़ा दुर्लभ है। उससे ज्यादा दुर्लभ हो गया है कि कैसे समझे कि कौन निष्पक्ष है?

साहित्य की स्थिति भी कुछ इसी प्रकार की हो गई है। वर्तमान समय में साहित्यकार भी सत्ता पक्ष व विपक्ष में अपनी कलम चला रही है। कोई पक्ष में कसीदे काढ रहा है तो विपक्ष में सत्ता की धज्जियाँ उड़ा रहा है। किन्तु बहुत कम है जो निष्पक्ष साहित्य का निर्माण कर रहे है। आपका साहित्य भी अवसरवादी हो गया है, कोई साहित्यकार किसी सरकारी पक्ष का हो तो वह इस वजह से पक्ष में कविता पढ़ता है। कि उसे पदलाभ मिले तो कोई इसलिए पढ़ता है कि सत्ता में बैठा व्यक्ति उसके जाति या समुदाय से है। कुछ लोग सत्ता के विपक्ष में होते है उनका फायदा विपक्ष से है तो वे विपक्ष के लिए पढ़ते है।

ऐसी स्थिति में कैसे कहा जाए कि साहित्य राजनीति से अलग है। साहित्य तो राजनीति से हमेशा जुड़ा रहा है। किन्तु प्राचीन समय में साहित्य निष्पक्ष ज्यादा था सत्ता पक्ष में उतना नहीं था जितना आज दिखाई देता है। आज तो स्थिति यह है कि अगर कोई आज सत्ता की आलोचना में कविता लिखता है तो दूसरे दिन उसके पक्ष में उस कविता का जवाब मिलता है। कोई साहित्यकार कविता के माध्यम से सत्ता से प्रश्न करता है तो सत्ता के बजाय कुछ चापलूस साहित्यकार पहले से जवाब देने को तैयार रहते हैं।

ऐसा नहीं है कि पहले सत्ता पक्ष में कविता या कोई संगीत नहीं लिखा जाता था। सत्ता पक्ष में साहित्य तो हमेशा से लिखा गया किन्तु वह कभी–भी मूल्य नहीं रखता। सत्ता पक्ष में लिखा गया साहित्य मूल्यहीन हो जाता है। जब साहित्य निष्पक्ष लिखा जाता है तो उसको हमेशा याद किया जाता है। आज हम देखे तो वही साहित्य प्रचलित है जो निष्पक्ष लिखा गया। उन्हीं साहित्यकारों को जाना जाता है, जो निष्पक्ष लिखते है। रामधारी सिंह दिनकर ने राजनीति में होते हुए कहा था'' सिंहासन खाली करो कि जनता आती है'' आज भी लोगों की ज्वान पर मिलता है। क्योंकि वह निष्पक्ष जनता के लिए लिखा गया था न कि सत्ता के लिए।

राजनीति और साहित्य दोनों ही अवसरवादिता के शिकार हो चुके हैं। ऐसे में एक निष्पक्ष साहित्य का चुनाव करना बड़ा मुश्किल होता है। ऐसा माहौल है कि निष्पक्ष तो दिखता ही नहीं जो है भी वह इस भीड़ में घुम हो गया है या राजनीतिक हरकतें घुम करा देती है। आज समाज के केवल सत्ता पक्ष और विपक्ष में सबकुछ दिखाई देता है। साहित्य भी अब पढ़ने लायक नहीं लगता। क्योंकि वह उस भावना से नहीं लिखा जाता है। जिस भावना से साहित्य कभी लिखा गया है।

कुछ साहित्यकार राजनीति में अपना भविष्य तलाशते रहते हैं तथा चुनाव में भाग लेते हैं। तो वह कभी निष्पक्ष साहित्य लिख ही नहीं सकते। सत्ता का प्रभाव इतना है कि अगर लिखना भी चाहे तब भी नहीं लिख सकते क्योंकि उनके आका नाराज हो जायेगें और यदि ऐसा हुआ तो फिर उन्हें कहीं और शरण लेनी पड़ेगी और नुकसान भी झेलना पड़ेगा। आज का साहित्य राजनीति के इशारे पर चलने लगा है। वह अपना रास्ता भूल चुका है। अब उसे वही अच्छा लगता है। जो साहित्यकार के सर्वाधिक हितों की पूर्ति करता हो।

''साहित्य समाज का दर्पण होता है''। साहित्य के माध्यम से समय की स्थिति से अवगत हो जाना होता है। साहित्य के किसी भी समय की राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक स्थिति का पता चलता है। किन्तु आज का साहित्य निष्पक्षता की पकड़ से दूर है, तब यह कैसे सम्भव होगा कि हमारी आने वाली पीढ़ी को साहित्य रूपी दर्पण एक स्वच्छ और निस्पक्ष स्थिति का दर्शन करायेगा। यह बहुत बड़ी समस्या है जो साहित्य हमारे पूर्वजों ने हमें दिया वह अच्छा था किन्तु हम अपनी पीढ़ियों को एक घुन लगा साहित्य व समाज छोड़कर जाएगें।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध पत्र का निष्कर्ष इस बात पर गौर करता है कि साहित्य और राजनीति एक–दूसरे से जुड़े हुये है और वर्तमान समय में साहित्य अपनी मूल स्वरूप को खो चुका है। वह राजनीति के पक्ष या विपक्ष में लिखा जाने लगा है। एक साहित्यकार विपक्ष में कुछ बोलता है तो दूसरा पक्ष भी बचाव के लिए तैयार रहता है। उदाहरण के लिए उत्तर प्रदेश की राजनीति पर प्रश्न उठाते हुये जब किसी भोजपुरी साहित्यकार द्वारा एक गीत गाया गया कि ''यूपी में काबा'' तो उसके उत्तर में किसी अन्य साहित्यकार ने लिखा ''यूपी में बाबा'' ऐसा साहित्य का क्या मूल्य हो सकता है।

साहित्य मूल्यहीन हो गया है ऐसा साहित्य चन्द रोज के लिए अच्छा लगता है किन्तु भविष्य के लिए इसका कोई औचित्य नहीं है। साहित्य ऐसा होना चाहिए जो समाज को भविष्य की राह दिखाए तथा समाज में सुधार लाए। समाज में व्याप्त कुरीतियों पर कुठाराघात करे किन्तु ऐसा साहित्य देखने को नहीं मिलता। इसका कारण है कि साहित्यकार राजनीति से प्रतिबद्ध हो गये है और अपनी सही सोच से भटक चुके हैं। ऐसे में साहित्य रूपी दर्पण मैला हो चुका है जो वास्तविकता दिखाने में असमर्थ है।

अवसरवादिता राजनीति और साहित्य समाज के लिए एक अच्छा संदेश नहीं हो सकता क्योंकि लोग अवसरों का फायदा लेने के लिए कुछ भी करते है और ऐसी स्थिति में हमारे सामने एक चुनौती है कि हम सही या गलत का चुनाव कैसे करें। कैसे पता करें कि कौन सा साहित्य निष्पक्ष लिखा जा रहा है। जिसे पढ़ा जा सके जिसे समझा जा सके। आज इस चुनौती से हमें लड़ना है। क्योंकि हमारे साहित्य रूपी दर्पण हमें रास्ता दिखाने में विफल सिद्ध हो रहा है। अब जरूरत है कि हम साहित्य और राजनीति में एक निश्चित दूरी तय करें तथा साहित्य का सही रास्ते पर लाये। जिससे साहित्य अपनी सही भूमिका निभा सकें तथा आने वाली पीढियों का सही मार्ग दर्शन करें।

सन्दर्भ सूची

1. सिंह आर0एन0पी0, अवसरवाद की राजनीति, (2019) विटास्टा पब्लिसिंग प्रा0लि0 नई दिल्ली।
2. विसेन शोभा, 'नागार्जुन के उपन्यासों में राजनीतिक चेतना' (17 मार्च, 2013), शब्द–ब्रह्म, मासिक पत्रिका ISSN 2320-0871.
3. उपासना, ''धुमिल की कविता में राजनीतिक चेतना'', (अप्रैल 2018), इनोवेशन द रिसर्च कन्सेप्ट, Vol-3, Issue-3.
4. ग्रेवाल ओमप्रकाश, ''साहित्य और राजनीति में अंतः सम्बन्ध'' आलेख, https://desharyana.in
5. डॉ0 पाण्डेय बृज कुमार, ''साहित्य में राजनीति और समाज'' (2019), मेखला प्रकाशन।
6. साहू विपिन, ''राजनीति में कला और साहित्य की भूमिका'', (मई 2022) आलेख, Yuth in politics (www.yuthinpolitics.in).
7. मृणाल नीलोत्पल, ''औघड़'' (2019), उपन्यास, हिन्द युग्म, दिल्ली।